❒ रवीन्द्रनाथ मिश्र

तारसप्तक की भूमिका का आकलन

हिन्दी साहित्य के इतिहास, में काव्य दस्तावेज के रूप में तारसप्तक का विशिष्ट स्थान है। इसका कारण यह है कि हिन्दी में यह अपने ढंग का पहला संकलन है, जिसमें संकलित सभी कवियों ने "वक्तव्य" और "पुनश्च" के माध्यम से साहित्य और कविता सम्बन्धी महत्त्वपूर्ण विचार व्यक्त किए हैं। और इसके प्रकाशन के पश्चात् वाद विवादों का एक लम्बा सिलसिला शुरू हुआ और कुछ नाराज रचनाकारों "नकेनवाद" की स्थापना तक कर डाली। वैसे तो हमारी धारणा है कि "तारसप्तक" के सर्वे सर्वा अज्ञेय जी हैं और हैं भी, लेकिन इसे एक मात्र संयोग ही कह सकते हैं। इस संबंध में श्री भारतभूषण अग्रवाल ने "प्रसंगवश" में लिखा है कि मध्यभारत में रहने वाले चार मित्रों "नेमिचंद्र जैन, प्रभाकर माचवे, प्रयागचंद्र शर्मा और गजानन माधव मुक्तिबोध ने आरम्भ में एक काव्य-संकलन की योजना बनाई थी। यह एक सहकारी संकल्प और प्रयास था। शर्त यह भी कि ये कवि मध्य प्रदेशीय हों और ऐसे हों, जिनका एक भी काव्य-संग्रह प्रकाशित न हुआ हो। इनका परम्परा से परिचित होना भी आवश्यक है। उक्त चार के अतिरिक्त वीरेन्द्र कुमार जैन और गिरजाकुमार का नाम भी जुड़ा। कवियों की संख्या सात होनी थी। फलतः नेमिजी और माचवे ने अज्ञेय की खोज की। अज्ञेय ने अपनी प्रतिभा और वैचारिक क्षमता का परिचय दिया और इस प्रकार "तारसप्तक" का सेहरा उनके मस्तक पर बंध गया। फिर भी हम उनकी साहित्यिक उपलब्धियों को भुला नहीं सकते। तारसप्तक से पूर्व अज्ञेय की वैचारिक और साहित्यिक मान्यताएँ उनके कुछ कविता संग्रहों, शेखर एक जीवनी उपन्यास और निबंधों के माध्यम से सामने आ चुकी थी। तारसप्तक का प्रकाशन १९४३ में हुआ था। जिसमें गजानन माधव मुक्तिबोध, नेमिचंद्र जैन, भारतभूषण अग्रवाल, प्रभाकर माचवे, गिरिजाकुमार माथुर, रामविलास शर्मा और अज्ञेय की कविताएँ संकलित हैं। जिन महत्वपूर्ण वक्तव्यों पर और पुनश्य की चर्चा मैंने आलेख के प्रारम्भ में की है और जिनके कारण तारसप्तक को महत्व दिया जाता है। वे दूसरे संस्करण १९६६ की हैं। आगे चलकर १९५१ में दूसरा और १९५९ में तीसरा और १९७९ में चौथा सप्तक प्रकाशित हुआ। उपर्युक्त सभी सप्तकों में अज्ञेय जी ने सात-सात कवियों की रचनाओं को स्थान दिया। इसमें चौथे सप्तक को छोड़कर अन्य सभी सप्तकों के महत्व को साहित्य जगत में स्वीकार किया गया। हमारा विवेच्य विषय "तारसप्तक" है। इसलिए यहाँ इसकी विवेचना ही तर्कसंगत होगी।

"तारसप्तक" के दूसरे संस्करण की भूमिका में अज्ञेय जी ने लिखा है कि यह महज एक संयोग ही था कि सात कवि एक मंच पर आ गए क्योंकि आज बीस वर्षों के बाद भी सभी

महत्वपूर्ण विषयों पर उनकी राय अलग है जीवन के विषय में, समाज और धर्म और राजनीति के विषय में, काव्य वस्तु और शैली के, छन्द और तुक के कवि के दायित्वों के प्रत्येक विषय में उनका आपस में मतभेद है। और यह बात भी उतनी ही सच है कि वे सब परस्पर एक दूसरे पर, दूसरे की रुचियों, कृतियों और आशयों, विश्वासों पर और यहाँ तक कि एक दूसरे के मित्रों और कुत्तों पर भी हंसते हैं। "इस प्रकार अन्य जीवन मूल्यों को लेकर भी आपस में मतभेद है। काव्य के प्रति एक अन्वेषी दृष्टिकोण ही उन्हें समानता के सूत्र में बांधता है।"

अज्ञेय ने तारसप्तक की भूमिका और अपने वक्तव्यों में 'प्रयोग' शब्द का प्रयोग कई बार किया है। प्रयोगशब्द अंग्रेजी कविता में प्रचलित एक्सपेरिमेंट हिन्दी में प्रयोग के नाम से चल पड़ा। आचार्य नंददुलारे बाजपेयी ने तारसप्तक की समीक्षा करते हुए कहाकि पिछले कुछ समय से ही हिन्दी काव्य क्षेत्र में कुछ रचनाएँ हो रही हैं जिन्हें किसी सुलभ शब्द के अभाव में प्रयोगवादी रचना कहा जा सकता है। बाद में अज्ञेय ने वाजपेयी जी के इस नाम का विरोध भी किया, किन्तु विरोध और अस्वीकृत के बाद भी यह शब्द प्रचार में आ गया।

तारसप्तक के कवियों को सतत अन्वेषी और प्रयोगशील माना गया। डॉ. नामवर सिंह के मतानुसार "कविता में होने वाले नये प्रयत्नों को प्रयोगवाद नाम दे दिया गया। इसकी विशेषता है सत्य के लिए निरंतर अन्वेषण और व्यक्तिवाद की प्रमुखता।"

राजनैतिक एवं सामाजिक परिस्थितियों को देखते हुए तारसप्तक की भूमिका पर कतिपय समीक्षकों ने विरोध मत व्यक्त किए। आचार्य नंददुलारे वाजपेयी ने कहा कि "प्रयोगवादियों में प्रायः बौद्धिक व्यक्तित्व की प्रधानता है और कविता के क्षेत्र में कोरा बुद्धिवाद अधिक दूर तक नहीं चल सकता।"

अज्ञेय अपने व्यक्तित्व और विचारों के प्रभाव से तारसप्तक पर इतने हावी हो गए कि लोगों की दृष्टि उन्हीं पर केन्द्रित हो गयी। वास्तविकता यह है कि अज्ञेय को छोड़कर शेष सभी कवि किसी न किसी रूप में स्वयं को सामाजिक चेतना एवं मार्क्सवाद से प्रभावित मानते थे। दूसरे सप्तक के कवि शमशेरजी ने 'नया साहित्य' में तारसप्तक पर जो समीक्षा लिखी थी उसे दो कारणों से किंचित असफल पाया था। एक तो यह कि जिन प्रयोगों का उल्लेख उसमें है, वे प्रयोग निराला एवं पंत के यहाँ भी देखे जा सकते हैं। यानी प्रयोग की कोई खास विशेषता इन कवियों में नहीं थी। उदाहरणार्थ निराला के "तुलसीदास" कुकुरमुत्ता, और "अणिमा", आदि कृतियों में यथार्थ की मुखरता को पहचाना जा सकता है। ये रचनाएँ १९३८-४२ के बीच की है। पंत के मध्यवर्ती काव्य में भी यथार्थ को विकास मिला है। जिसके संकेत "परिवर्तन" कविता में प्राप्त होते हैं। "युगांत," "युगवाणी," ग्राम्या १९३६-४० बीच की कृतियाँ है, जहाँ ग्राम्य जीवन के दृश्य हैं।

इस प्रकार निराला और पंत की परवर्ती कृतियों में नए काव्य का पूर्वाभास देखा जा सकता है। वह भी विशेषतया सामाजिक यथार्थ की भूमि पर १९३६ में प्रगतिशील लेखक संघ का अधिवेशन हुआ, जिसमें सभापति प्रेमचंद का ऐतिहासिक वक्तव्य साहित्य में सौन्दर्य की नई यथार्थवादी अवधारणाएँ प्रस्तुत करता है। जिसका समापन अंश इस प्रकार है "हमारी कसौटी पर वही साहित्य खरा उतरेगा, जिसमें उच्च चिन्तन हो, स्वाधीनता का भाव हो, सौन्दर्य का सार हो, सृजन की आत्मा हो, जीवन की सच्चाइयों का प्रकाश हो, जो हममें गीत, संघर्ष और बेचैनी पैदा करे, सुलाए नहीं क्योंकि अब और ज्यादा सोना मृत्यु का लक्षण है।"

नागार्जुन और त्रिलोचन जैसे महत्वपूर्ण प्रगतिशील कवियों को सप्तकों की श्रृंखला में नहीं रखा गया। इससे साफ जाहिर होता है कि अज्ञेय ने अपने समर्थकों को ही सप्तकों में स्थान दिया। तारसप्तक के दूसरे संस्करण के पुनश्च वक्तव्य में नेमिचंद्र जैन ने स्वीकार किया है, तारसप्तक भ्रम का शिकार हुआ कवियों के काल्पनिक प्रयोगवादी की ही चर्चा अधिक हुई, उनकी कविता का उचित आकलन नहीं हो सका।''

वैसे तो तारसप्तक की भूमिका में अज्ञेय ने पहले ही कह दिया था कि ''तारसप्तक किसी भी रूप या अर्थ में किसी साहित्यिक आन्दोलन या प्रवृत्ति से प्रेरित न था। तारसप्तक के कवि प्रयोगवादी नहीं थे। उनकी अनुभूति और अभिव्यक्ति दोनों तत्कालीन सामाजिक और साहित्यिक परिस्थितियों की स्वाभाविक उपज थी। छायावाद यदि द्विवेदीयुगीन कविता की स्थूलता के विरुद्ध सूक्ष्मता का विद्रोह है तो प्रगतिवाद-छायावादी सूक्ष्मता के विरुद्ध स्थूलता का विद्रोह है और पुनः तारसप्तक उस स्थूलता के विरुद्ध सूक्ष्मता का विद्रोह ठहरा। कविता के अंदर से कविता को समझने का प्रयास किया गया। साहित्य अपने मूल रूप में सामाजिक या सामूहिक चेतना नहीं है, वह तो वैयक्तिक चेतना ही हो सकती है। यह वैयक्तिक चेतना मूलतः अज्ञेय शमशेर बहादुर और गिरिजाकुमार माथुर की रचनाओं में दमित इच्छाओं और आकांक्षाओं के रूप में अभिव्यक्त हुई। अज्ञेय की कविता ''सावन-मेघ'' में काम भावना का चित्रण देखा जा सकता है।

आह, मेरा श्वास उत्तप्त
धमनियों में उमड़ आयी है लहू की धार
प्यार कहाँ हो नारि?

प्रयोगवादी रचनाओं में विचित्र कल्पनाएं, नए प्रतीक बिम्ब उपमान आदि के प्रभाव के समक्ष सामाजिकता का लोप हो गया है। तारसप्तक की रचनाएं सामान्य पाठक के समझ के बाहर है। अहं केन्द्रित व्यक्तिवाद से रचना का सामाजिक पक्ष हल्का होता है। अज्ञेय को इस बात का एहसास हो गया था। उनकी प्रतिनिधि कविता ''यह दीप अकेला'' में उनके अहं को देखा जा सकता है।

यह दीप अकेला स्नेह भरा
है गर्व भरा मदमाता पर
इसको भी पंक्ति को दे दो।

प्रख्यात समीक्षक नामवर सिंह का कथन है कि ''प्रयोगवाद के पंद्रह वर्षों का इतिहास व्यक्तिवाद के दो सीमान्तों के बीच फैला हुआ है इनमें एक सीमान्त है मध्यवर्गीय परिवेश के प्रति मध्यवर्गीय कवि का वैयक्तिक असन्तोष और दूसरा सीमान्त है जनजागरण से डरे हुए कवि की आत्मरक्षा की भावना। कुल मिलाकर चरम व्यक्तिवाद ही प्रयोगवाद का केन्द्रबिन्दु है और विभिन्न राजनैतिक, सामाजिक मान्यताओं के रूप में यह संकीर्ण व्यक्तिवाद अपने को व्यक्त करता रहता है।''

उपर्युक्त कथन तारसप्तक के कतिपय कवियों के संदर्भ में ही उपयुक्त है, क्योंकि अन्य कवियों की रचनाओं में इतना घोर वैयक्तिकवाद नहीं है। लगता है अज्ञेय जी समाज में मध्यवर्ग की अस्मिता को स्थापित करना चाहते थे। आगे चलकर आजादी के बाद भारतीय मध्यवर्ग स्वयं को अधिक प्रभावी बनाने में उत्सुक दिखाई देता है। राजनीतिक और नौकरशाही में उसकी

भागीदारी बढ़ी है। सार रूप में हम कह सकते हैं कि तारसप्तक ने मध्यवर्गीय चेतना को जन्म दिया।

तारसप्तक के प्रकाशन को समसामयिक संदर्भों के तहत भी आंका गया और कहा गया कि एक तरफ १९३९ में द्वितीय विश्वयुद्ध की घोषणा हो गई थी। 1942 का आन्दोलन शुरू हो गया था जो कि आजादी की अन्तिम लड़ाई थी। विश्वयुद्धोपरान्त देश की सामाजिक, राजनीतिक और आर्थिक स्थिति ठीक नहीं थी। यहीं यह प्रश्न उठना स्वाभाविक है कि समय की "स्थितियों से तारसप्तक का क्या संबंध है।"

उपर्युक्त आरोप मुख्यतः कतिपय कवियों को लेकर ही लगाया जा सकता है अन्यथा सप्तकों के अन्य कवि किसी न किसी रूप में समाज और समसामयिक घटनाओं से जुड़े रहे। पाश्चात्य साहित्य के प्रभाव के कारण साहित्य धरातल पर भाषाशिल्प और काव्य रूप आदि क्षेत्रों में अनेकानेक प्रयोग हुए और प्रतीकवाद बिम्बबाद, अस्तित्ववाद और फ्रायडवाद आदि न जाने कितने वाद अस्तित्व में आए। तारसप्तक के सम्बन्ध में बहुत सारी आलोचनाएं समीक्षकों और स्वयं सप्तक के कवियों द्वारा हुई हैं और आज भी हो रही हैं, फिर भी हम इसके ऐतिहासिक महत्व को भुला नहीं सकते। तारसप्तक ने कविता क्षेत्र में मील के पत्थर का काम किया। इसमें संकलित कुछ कवियों का हिन्दी साहित्य में विशिष्ट स्थान है। मुक्तिबोध और अज्ञेय ने साहित्य चिंतन के क्षेत्र में रचनात्मक कार्य किया तो आलोचक के रूप में रामविलास शर्मा और नाट्यलोचन के क्षेत्र में नेमिचंद्र जैन का योगदान सर्व विदित है।

सबसे खास बात तो यह है कि तारसप्तक के कवियों ने छायावादी वायवीयता, उत्तर-छायावादी अबौद्धिकता और प्रगतिवादी सामाजिक एकांगिकता से अपने को मुक्त किया। अगर हम छायावाद पर ही अपना ध्यान केन्द्रित करें तो यह देखा जा सकता है कि हिन्दी कविता में अपनी विचारशीलता से जो भटकाव छायावादोत्तर कविता के माध्यम से हो रहा था, इसे दुरुस्त करने की कुछ चेष्टा तारसप्तक के कवियों ने बौद्धिकता को स्थान देकर किया।

यह सही है कि आधुनिक युग में कविता आसमान से जमीन पर उतरी, अध्यात्म से यथार्थ पर आई। लेकिन अभी भी वह व्यक्ति के वास्तविक अनुभव का हिस्सा बनने से झिझकती रही। तारसप्तक ने कविता की इसी अपूर्ण आकांक्षा को पूरा करने का प्रयास किया। इसमें जो सुख-दुख, हर्ष-विषाद, संघर्ष-पराजय, घुटन-टूटन, आह्लाद-आलोड्न है वह कवि का अपना पहले है किसी और का बाद में।

अपने युग और परिवेश से सतही, वस्तुगत इतिवृत्तात्मक या भावुक रूप में ढालने के बजाय उससे रूबरू होकर निज के अन्तःकरण की टकराहट में पेश करना अधिक बेहतर है। इस प्रकार का चिंतन तारसप्तक से ही शुरू हुआ।

इसकी एक और विशेषता है कि हिन्दी में उसने पहली बार कविता और जीवन के सरलीकरण के विरुद्ध बीड़ा उठाया। उसने यह जताने की कोशिश की कि जीवन सरल नहीं है और न ही कविता। उनमें बहुत जटिलताएँ, कुंठाएं, रूढ़ियाँ और टकराव भी हैं।

सन् १९४० के आस-पास आधुनिक बौद्धिकता आदि शब्द काफी प्रचलित हो गए थे। इनके प्रतिसमीक्षकों के विभिन्न विचार भी प्रकाशित हो रहे थे। गिरिजा कुमार माथुर ने तारसप्तक के दूसरे संस्करण के पुनश्च में आधुनिकता को परिभाषित करते हुए कहा है कि "परिवेश के प्रति गहरी जागरूकता, सामाजिक यथार्थ की चेतना, इतिहास का प्रथम बार तीव्र बोध, भाव

जगत में सूक्ष्म प्रतिक्रियाओं की पहचान, युद्धगत संक्रान्ति की मानवीय संवेदना, अन्तर्राष्ट्रीय उन्मुखता नवीन रोमानी भाव और परिवर्तित मूल्यों की टकराहट।" इस प्रकार पश्चिमाभिमुख आधुनिकता पर बहस की शुरुआत व्यापक तौर पर "तारसप्तक" से ही शुरू हुई। साहित्य, कला, संस्कृति, धर्म और आचार-विचार में काफी बदलाव आना शुरू हो गया।

"तारसप्तक के अधिकांश कवियों ने अपने वक्तव्यों में मार्क्स, फ्रायड और नीत्शे आदि का जिक्र किया।" यह सही है कि "तारसप्तक" स्वतंत्रता संग्राम के आन्दोलनों से वंचित रहा फिर भी आधुनिकता को परिभाषित करने की कोशिश स्वतंत्रता की बढ़ती चेतना का ही एक रूप है।

साहित्य में संशय को एक मूल्य के रूप में स्वीकार किया गया। अपने को और समाज के संबंध को संदेह की दृष्टि से देखना इतनी बड़ी और बेबाक ईमानदारी से तारसप्तक ने ही शुरू किया। नरेश मेहता की रचना "संशय की एक रात" और धर्मवीर भारती के 'अंधायुग' नाटक में इसके स्वरूप को देखा जा सकता है। समाज एवं राष्ट्र के विभिन्न स्तरों पर संशय का वातावरण निर्मित होना शुरू हुआ। मूल्यों के हनन और न कुछ करने के स्थान पर बहुत कुछ पाने की आशाएं बलवती हुई। इससे मनुष्य का आत्मबोध जागृत हुआ और वह अपने वर्तमान और भविष्य के प्रति जागरूक हुआ।

तारसप्तक के प्रकाशन के पश्चात्य कविता में विचार, कथ्य, भाषा शिल्प तकनीक के क्षेत्र में ऐतिहासिक, बदलाव यहीं से शुरू हुआ और कालान्तर में यह प्रयोग विस्तार पाता गया। साहित्य के विविध पक्षों पर आलोचना का दौर यहीं से प्रारम्भ हुआ। हिन्दी कविता और आलोचना की अधिकांश बहसों में "तारसप्तक" के अधिकांश कवियों ने भाग लिया, जिनमें अज्ञेय, मुक्तिबोध, रामविलास शर्मा, नेमिचंद्र जैन और प्रभाकर माचवे प्रमुख है। कृतियों की समीक्षा शास्त्रीय मानदण्डों के आधार पर न करके नूतन दृष्टि से करने का प्रचलन शुरू हुआ। उपन्यास कहानी और नाटक के क्षेत्र में भी महत्वपूर्ण बदलाव आया।

अन्ततः हम कह सकते हैं कि यह कविता यात्रा का वह पड़ाव है जहाँ से आधुनिकता की, प्रगति और प्रयोग की, भाषा के इस्तेमाल की, विचारधारा और साहित्य की अवधारणा भी बहुत कुछ बदली। इसके पश्चात्, कला, रंगमंच, भारतीय और विश्व सिनेमा की अच्छी कृतियों से कवियों का जो सम्बन्ध बना, उसने भी कई गुणात्मक परिवर्तन कर डाले। जीवन-जगत के सम्बन्धों, रचनाकारों की सोच-समझ और चिंतन में बदलाव आया। आदर्शवाद के स्थान पर यथार्थवादी और सामंती एवं जमींदारी व्यवस्था के स्थान पर पूँजीवादी व्यवस्था का आगमन हुआ। चीजों एवं स्थितियों को उसी रूप में चित्रित करने पर बल दिया गया। इस विकास यात्रा में कविता और अधिक कवि के पास गई जिसमें कवियों ने अणु से लेकर ब्रह्माण्ड तक को नए रूप में चित्रित करने का प्रयास किया। कविता व्यापक अर्थ में अस्तित्व मूलक यथार्थवाद की डगर पर आगे बढ़ी।

❑

—हिन्दी विभाग
गोवा विश्वविद्यालय
गोवा – ४०३२०६